Website : www.ijbasr.org ISSN : 2349-1965
International Journal of Basic & Applied Science Research
Peer Reviewed and Refereed Journal Multidisciplinary 2024; 11(3); 7-15
Impact factor 0.9

दिल्ली सल्तनत एवं कानूनी व्यवस्था : एक ऐतिहासिक अध्ययन

अविनाश कुमार
इतिहास विभाग, महात्मा गाँधी महाविद्यालय, सुंदरपुर, दरभंगा

सार :

यह पत्र दो प्रमुख शासकों, सुल्तान कुतुबुद्दीन ऐबक (1206–1210 इसके बाद कुतुबुद्दीन) और सुल्तान शम्सुद्दीन इल्तुतमिश (1211–1236 इसके बाद इल्तुतमिश) की भूमिका का विश्लेषण करता है। गुलाम वंश के सुल्तान कुतुबुद्दीन ने 1206 में दिल्ली सल्तनत की स्थापना की थी और इसे 1290 में बुझा दिया गया था। दिल्ली के सुल्तानों के पास लंबे समय तक भारत में प्रमुख क्षेत्र था। पूर्व में प्रमुख महत्वपूर्ण पदों पर दक्कन में सुल्तानों का कब्जा था। सुल्तानों ने न्याय को अच्छी तरह से प्रशासित किया और कानून और व्यवस्था बनाए रखने और न्याय के उचित व्यवस्था के लिए न्यायिक अधिकारियों की नियुक्ति की थी। यह पत्र दिल्ली के सुल्तानों के तहत न्याय और कानूनी व्यवस्था के प्रशासन का आलोचनात्मक मूल्यांकन प्रस्तुत करता है।

मुख्य–शब्द : *कानूनी प्रणाली; सुल्तान, दिल्ली* प्रशासन*; न्याय का* प्रशासन /

परिचय :

मध्यकालीन भारत के इतिहास को भारत का मुस्लिम इतिहास नहीं माना जा सकता। यह एक ऐसा दौर था जब कई भारतीय शासक सैन्य पृष्ठ भूमि से थे। हालाँकि, 1206 ईस्वी में दिल्ली सल्तनत की स्थापना ने भारतीय इतिहास में एक नए युग की शुरुआत की। दिल्ली सल्तनत की स्थापना 1206 में गुलाम वंश के कुतुबुद्दीन ने की, जब वायसराय 1206 में अपने रॉयल मास्टर की मृत्यु के बाद दिल्ली के पहले स्वतंत्र सुल्तान बने। गुलाम वंश 1290 तक चला।[1] गोरी की मत्यु के बाद कुतुबुद्दीन शासक बना। दिल्ली सल्तनत में शामिल थेः (ए) गुलाम वंश (1206–1290 ईस्वी), (बी) खिलजी राजवंष (1290–1320 ईस्वी), (सी) तुगलक राजवंश (1320–1414 ईस्वी), (डी) सैय्यद राजवंश (1414 –1454 ईस्वी) और (ई) लोदी वंश (1451–1526 ईस्वी), (सुलसमान, 2013)। उनके बाद मुगलों ने (1526–1857), शासन किया।

दो प्रमुख सुल्तानों की भूमिका *सुल्तान कुतुबुद्दीन ऐबक (1205–1210)* :

कुतुबुद्दीन ने भारत में गुलाम वंश की स्थापना की। वह गोरी का गुलाम था। कुतुबुद्दीन गुलाम था जिसे गोरी ने मुक्त किया था और वह 1206 ईस्वी से सुल्तान बन गया, क्योंकि यह दिल्ली भारत की सल्तनत था। यह ध्यान रखना दिलचस्प है कि वह गुलाम था लेकिन उसने भारतीय उपमहाद्वीप में इस क्षेत्र के सुल्तान के रूप में शासन किया। उसने अन्य शासकों के खिलाफ विद्रोह किया और अपनी स्वतंत्रता प्राप्त की। वे अच्छे नैतिक चरित्र वाले, उदार और दृढ़ निश्चयी व्यक्ति थे। उन्होंने भारत में गोरी की बहुत मदद की। उन्हें उन प्रमुख क्षेत्रों के प्रभारी के रूप में रखा गया था जिन पर गोरी का कब्जा था क्योंकि वह उनके बहुत करीब थे। बाद में वे स्वयं सुल्तान बने। उसने बख्तियार खिलजी की मदद

Corresponding Author : *अविनाश कुमार*
E-mail : akavinash118@gmail.com
Date of Acceptance : 09.10.2024
Date of Publication : 30.11. 2024

से बिहार और बंगाल पर कब्जा कर लिया जो सेना के जनरल थे। उसने अजमेर और मेरठ में अपने खिलाफ विद्रोह की सभी आवाजों को दबा दिया। उसने 1206 में उत्तर के बड़े हिस्से पर कब्जा कर लिया। यह दिलचस्प है कि इल्तुतमिश, जो बाद में सुल्तान बना, ने कुतुबुद्दीन की बेटी से शादी की। ऐसा लगता है कि इल्तुतमिश उसके बहुत करीब था। 1210 में कुतुबुद्दीन की मृत्यु हो गई। उसके बाद आराम शाह शासक था जो केवल आठ महीने के लिए सुल्तान बना। उसकी क्रूरता के कारण लोगों ने उसके खिलाफ विद्रोह कर दिया और इस संदर्भ में इल्तुतमिश ने उसे हरा दिया।[2]

सुल्तान इल्तुतमिशा (1211–1236) :

गुलाम वंश के महान सुल्तानों में से एक इल्तुतमिश था। वह समर्पित, दृढ़निश्चयी और मेहनती थे। उनके उक्त गुणों के कारण कुतुबुद्दीन ने उन्हें अपनी हिरासत में ले लिया और एक राज्यपाल के रूप में नियुक्त किया। वह भारत में बहुत बहादुर और शक्तिशाली शासक था। उसने 1211 में आराम शाह को हराया और बाद में, 1216 में उसने पूर्ण नियंत्रण पाने के लिए ताजुद्दीन यिल्डोज़ को हराया। मुल्तान में उसने नसीरुद्दीन कबाचा को हराया। हालांकि, नसीरुद्दीन कबाचा ने उसके खिलाफ विद्रोह कर दिया और भाग गया। अंत में, इल्तुतमिश ने बंगाल पर अधिकार कर लिया। बाद में उसने विभिन्न युद्धों में प्रमुख क्षेत्रों पर कब्जा कर लिया। उसके शासन काल में न्यायिक प्रशासन सुचारु था। प्रभावी न्याय सुनिश्चित करने के लिए वह न्याय की जंजीर टांगने के लिए अपने महल के बाहर जाता था। उन्होंने काजियों को ईमानदारी, सच्चाई और सच्चाई के साथ काम करने का निर्देश दिया। वह मुकदमों के शीघ्र निपटारे के लिए काजियों को संबोधित करते थे। उन्हें कई इतिहासकारों द्वारा दिल्ली के मुस्लिम साम्राज्य का वास्तविक संस्थापक माना जाता था। उन्होंने राजधानी को लाहौर से दिल्ली भी स्थानांतरित कर दिया। वह न्याय प्रदान करने के संबंध में बहुत कुशल और जागरूक थे। उन्होंने मुसलमानों के लिए इस्लामी कानून लागू किया और अदालतों में हिंदुओं के लिए पंडितों को पेश किया। पंडितों द्वारा विशेष रूप से धार्मिक मामलों में हिंदुओं की सहायता की जाती थी।[3] 1236 में इल्तुतमिश की मृत्यु हो गई और रजिया अगला सुल्तान बन गयी। इल्तुतमिश ने कई सुधारों की शुरुआत करके और क्षेत्रों में शांति स्थापित करके राज्य को मजबूत किया। वह भारत को अपना स्थायी घर बनाने वाले पहले मुस्लिम राजा थे और बगदाद में खलीफा को अपनी अधीनता की पुष्टि करते हुए, उन्होंने अपने लिए सुल्तान का खिताब चुना। इल्तुतमिश ने चालीस दरबारियों को नियंत्रित करने की कोशिश की, जो कोर्ट के भीतर पावरब्रोकरों के एक कुलीन क्लब के रूप में काम करते थे। इल्तुतमिश ने रुक–रुक कर होने वाले मंगोल आक्रमणों से अपने साम्राज्य की रक्षा की और इस तरह भारत को बड़े पैमाने पर तबाही से बचाया। जब कुछ उलेमाओं ने गैर–मुसलमानों को जबरन इस्लाम में परिवर्तित करने की सलाह दी, तो इल्तुतमिश ने उनके दबाव का विरोध किया और अपने शासन के लिए एक व्यापक संस्थागत आधार बनाने का प्रयास किया। इल्तुतमिश ने इन सभी कठिनाइयों का सामना करते हुए बड़ी निडरता का परिचय दिया और विभिन्न समस्याओं से निपटने के लिए रणनीति और समय की चतुर समझ दिखाई। हालांकि, "इल्तुतमिश के पांच उत्तराधिकारियों में से कोई भी – दो बेटे, एक बेटी और दो पोते जो एक–दूसरे का त्वरित उत्तराधिकार में अनुसरण करते थे – सक्षम नेता साबित नहीं हुए। मंगोल सीमा पर दबाव बनाते रहे

और लाहौर और मुल्तान दोनों पर छापे मारे गए और लूटपाट की गई।[4]

दिल्ली के सुल्तानों की कानूनी व्यवस्था वफादारी, पालन और शारीयत का सख्त पालन :

इस्लामी कानून (शरिया) का कड़ाई से पालन और आज्ञापालन दिल्ली के सुल्तानों द्वारा अपनाया गया था। ऐसे कई मामले हैं जिनमें उन्होंने सैन्य तख्तापलट के माध्यम से अपना सिंहासन जीता था। उन्होंने पूरे भारतीय उपमहाद्वीप में न्याय के अंत को सुरक्षित करने के लिए इस्लाम की शिक्षाओं के अनुसार अपना जीवन जीने की कोशिश की। सभी परिस्थितियों में वे शरीयत के अनुसार न्याय करते थे। दरअसल, सुल्तान अपनी सेना को खुश करना चाहते थे और लोगों के बीच लोकप्रियता चाहते थे। सबसे प्रमुख कार्य सबसे पहले कुतुबुद्दीन ने किया था। वह सिद्धांतों के व्यक्ति थे और उनकी अच्छी प्रतिष्ठा थी। उसका राज्य सर्वोत्तम कानूनों के तहत शसित था। दूसरा, इल्तुतमिश ने न केवल कानून और व्यवस्था बनाए रखने की कोशिश की बल्कि अपने महल के बाहर न्याय की जंजीर को लटकाने की प्रथा भी शुरू की। लोगों के बीच न्याय का संतोशजनक प्रशासन सुनिश्चित करने के लिए वह व्यक्तिगत रूप से राज्य के पदाधिकारियों के कार्यालयों को देखकर संतुष्ट होना चाहता था। उनके शासनकाल के न्यायविदों के अनुसार वे कानून और व्यवहार में पारंगत थे।[5]

इल्तुतमिश के बाद के सभी सुल्तानों ने उसका अनुसरण करने का प्रयास किया है। परिणामस्वरूप उनमें से अधिकांश ने शरीयत के कानून का सख्ती से पालन किया और न्याय के प्रशासन को धार्मिक और पवित्र कर्तव्य माना। उदाहरण के लिए, अलाउद्दीन खिलजी (1296–1316) ने घोषणा की कि सरकार राजाओं के लिए है और धर्म काजियों और मुफ्तियों के लिए है। एक अन्य सुल्तान मुहम्मद तुगलक (1324–1351) ने अपने एक न्यायाधीश को सुल्तानों के निर्देषों के अनुसार नए कानून बनाने के लिए संबोधित किया, लेकिन उन्होंने शरीयत की बुनियादी और मूल आवश्यकताओं का उल्लंघन नहीं किया। किसी को भी शरीयत के नियमों के खिलाफ जाने की इजाजत नहीं थी"।[6]

सख्त क्रियान्वयन और कानून का सम्मान :

कानून का सम्मान और न्याय प्रदान करना सुल्तानों का मुख्य उद्देष्य था। ऐसे उद्देष्यों को प्राप्त करने के लिए उन्होंने न्यायिक पदों पर विद्वान और सक्षम व्यक्तियों को नियुक्त किया है। मुफ्ती का उपयोग अदालतों की सहायता के लिए भी किया जाता था और वे सभी कानून का पालन करने और शरीयत के कानून के अनुसार इसे संचालित करने के लिए बाध्य थे। यहाँ तक कि स्वयं सुल्तानों ने भी न्यायालयों के निर्णयों का पालन किया। वे स्वयं सख्त पर्यवेक्षक थे और उन्होंने सभी राज्य पदाधिकारियों के लिए कानून का सम्मान करना अनिवार्य बनाने की कोशिश की। पवित्र कानून के उल्लंघनों की मनाही थी। जियाउद्दीन बरनी ने अलाउद्दीन खिलजी के शासनकाल का वर्णन निम्नलिखित शब्दों में किया है: "उनके शासनकाल के अंतिम दस वंशों के दौरान, सामान्य रूप से मुसलमानों के प्रमुखों का झुकाव सत्यता, सच्चाई, ईमानदारी, न्याय और संयम की ओर था"।[7] यह स्पष्ट है कि सुल्तान के शासन में अधिकांश शासकों को कानून का सम्मान करना चाहिए और इसके कार्यान्वयन को बनाए रखना चाहिए ताकि मुख्य रूप से लोगों के बीच न्याय किया जा सके और दूसरा इसे मूल स्तर पर लागू किया जा सके। सुल्तानों ने भारत में अपने शासनकाल के दौरान कानून के लिए सम्मान सुनिश्चित किया। इस संबंध में, प्रारंभिक अब्बासिद संस्थानों ने उन्हें प्रभावित किया और उन्होंने कुछ

शा ष

संशोधनों के साथ अब्बासिद खिलाफत की प्रथा का पालन किया।

अब्बासिद संस्थानों का प्रभाव :

सुल्तान अब्बासिदों से बहुत प्रभावित थे, इसलिए वे एक ही पैटर्न पर संस्थानों जैसे दीवान–ए–मुज़ालिम, इहतीसाब और अदालतों के ग्रेड स्थापित करते थे। उन्होंने मिस्र और तुर्की में खलीफाओं को मान्यता दी है। आजम तारा (इस्तांबुल के पूर्व मंत्री) को सुल्तानों ने दिल्ली में मंत्री बनने के लिए आमंत्रित किया था। इससे पहले उन्होंने तुर्की सुल्तानों की सेवा की थी। यहां यह उल्लेख करना आवष्यक है कि सुल्तानों के शासनकाल में न्यायिक संस्थान और न्यायालयों में काजियों के कार्य अब्बासिद मॉडल पर आधारित थे। सभी सुल्तानों में न्यायिक सुधार फ़िरोज़ शाह तुगलक (1351–1388) द्वारा पेश किए गए जिन्होंने इस संबंध में कड़ी मेहनत की। सभी मुसलमानों के लिए समान व्यवस्था थी न कि हिंदुओं के लिए। इस्लामी कानून में यह अच्छी तरह से मान्यता प्राप्त सिद्धांत है कि गैर–मुस्लिम यानी जिम्मी को अपने विवादों और मामलों को अपने धर्म के माध्यम से हल करना चाहिए। वे इस्लामी कानून के मुख्य विषय नहीं हैं। इसलिए, सुल्तानों के शासनकाल में दीवानी मामलों, विरासत और समान मामलों को इस्लामी कानून के माध्यम से हल किया जाता था जबकि हिंदुओं का अपना विशेष कानून था। उन्हें देश के कानून का सम्मान करने की अनुमति थी। आपराधिक कानून के संबंध में, हिंदू और मुस्लिम दोनों के साथ समान व्यवहार किया जाता था। हिंदुओं के स्थानीय क्षेत्रों में स्वशासन था जिसके तहत उन्हें अपना कानून लागू करना पड़ता था। आश्चर्यजनक रूप से, सुल्तानों ने छोटी–छोटी व्यवस्थाओं में हस्तक्षेप किया था जहाँ केवल प्रशासनिक इकाइयाँ महत्वपूर्ण थीं। सुल्तानों ने हिंदुओं को अपना विशेष कानून लागू करने के लिए अधिकृत किया था।[8]

सुल्तानों के अधीन सामान्य प्रशासन का अवलोकन सम्राट स्वयं सुल्तान था। उनका चुनाव इस्लाम के खलीफाओं की तरह ही था, यानी उन्हें राजधानी में प्रमुख लोगों द्वारा चुना गया था। हालाँकि अधिकांश सुल्तानों का चुनाव उसी पैटर्न पर किया गया था; कुछ मजबूत और शक्तिशाली सुल्तानों ने अपने युवा पुत्रों को सुल्तान बनने के लिए प्रोत्साहित किया था। न्यायपालिका के संदर्भ में, मुख्य न्यायाधीश एकमात्र अधिकार था। उन्हें काजी–उल–कुजत के नाम से जाना जाता था। सुल्तान को मुख्य न्यायाधीश और अन्य अधिकारियों की उपस्थिति में जनता के सामने पेश किया गया। मुख्य न्यायाधीश सुल्तान के अधीन था। अधिकांश सुल्तानों ने न्यायिक शाखा में हस्तक्षेप नहीं किया। सुल्तान को मंत्रिपरिषद द्वारा भी सहायता प्रदान की गई थी लेकिन वह ऐसी सलाह पर कार्य करने के लिए बाध्य नहीं था। वह अपने विवेक से निर्णय ले सकता था। प्रमुख विभागों में शामिल थाः वित्त, सेना, सामान्य प्रशासन, चर्च विभाग, कानून और न्याय। कुछ मामलों में सुल्तानों के मुख्यमंत्रियों को मुकदमों की सुनवाई के लिए विशेष न्यायिक अधिकार दिए गए थे। वे कार्यकारी कर्तव्यों के साथ न्यायिक कर्तव्यों का पालन करते थे।[9] सुल्तान का साम्राज्य प्रांतों में विभाजित था। प्रांतों को जिलों में विभाजित किया गया था। फिर जिलों को परगना या गांवों (आज के कस्बों) में उप–विभाजित किया गया था। प्रत्येक प्रान्त में एक राज्यपाल होता था। उन्हें नाज़िम के नाम से भी जाना जाता था। राज्य के कार्यकारी अधिकार का प्रयोग प्रत्येक प्रांत में सुल्तान के नाम पर राज्यपाल द्वारा किया जाता है। अन्य विभागीय प्रमुख राज्यपाल के अधिकार

में थे। आमतौर पर वे राज्यपाल द्वारा जारी निर्देशों पर काम करते थें। राज्यपाल का प्राथमिक कार्य कानून और व्यवस्था बनाए रखना था। इस संबंध में उनके सहायक अधिकारी को फौजदार के नाम से जाना जाता था। फौजदार राज्यपाल के प्रधान कार्यकारी अधिकारी थे। पुलिस विभाग भी फौजदार के नियंत्रण में था। शहरों और परगना में कोतवाल और शिकदार क्रमश : फौजदार के समान कार्य करते थें। राज्यपाल प्रांत में मुख्य न्यायिक अधिकारी भी थे। हालाँकि न्याय प्रशासन का एक अलग विभाग था जिसे महकम–ए–क़ज़ा के नाम से जाना जाता था जिसमें मुख्य न्यायाधीश सर्वोच्च अधिकारी होता था और अन्य सभी काज़ी उसके अधीनस्थ होते थें। प्रांतों में, प्रांतीय प्रमुख काज़ी थे। जिलों में, जिला काज़ी थे। संस्थाएं अब्बासिद खिलाफत की तरह ही थीं। चर्च विभाग को महकामा–शारिया के नाम से भी जाना जाता था। राजधानी में उक्त विभाग में पृथक मुख्य न्यायिक अधिकारी थे। उसे शाही स्तर पर बहुत सारे न्यायिक कार्य करने पड़ते थे। वह केंद्र में न्याय के प्रशासन के लिए जिम्मेदार था।[10]

भूमि कराधान :

दिल्ली के सुल्तानों ने अपनी विशाल संपत्ति को भूमि (खालसा) में विभाजित कर दिया, जो सीधे ताज द्वारा प्रशसित और कर लगाया जाता था और भूमि अपने नौकरों और दासों को सेवा के लिए भुगतान के रूप में दी जाती थी। सुल्तान स्वयं जमींदार था इसलिए उनमें से अधिकांश "अपनी उत्पादक क्षमता को बढ़ाने के लिए राज्य के संसाधनों को नियोजित करते हैं"।[11] अलग–अलग जमीनों पर कर की दर अलग–अलग थी। हालाँकि एक तिहाई भूमि सुल्तानों द्वारा ली गई थी। उनमें से कुछ निजी संपत्ति और कृषि उपज पर आधा कर लेते थे। इसके अलावा, कुछ सामानों के वितरण और कराधान को नियंत्रित करने के लिए राजधानी में एक केंद्रीय डिपॉजिटरी बनाए रखा गया था। खुदरा विक्रेता और व्यापारी अपनी व्यक्तिगत सुरक्षा और समृद्धि के लिए तंत्र पर निर्भर थे, जिनके निरीक्षकों और पर्यवेक्षकों को "न्याय के चाबुक के माध्यम से" से निपटने के लिए अधिकृत किया गया था।[12]

दिल्ली के सुल्तानों के अधीन न्यायिक प्रशासन

केंद्र में न्यायालय संगठन/पदानुक्रम

केंद्र में निम्नलिखित न्यायालय थे,

राजा का दरबार : यह केंद्र में श्रेष्ठ न्यायालय था। सुल्तान इस न्यायालय का पीठासीन अधिकारी होता था। इस न्यायालय का अधिकार क्षेत्र सभी प्रकार के मामलों की सुनवाई करना था;

मुख्य न्यायाधीश न्यायालय : यह केंद्र में एक और न्यायालय था। इसका नेतश्त्व काजी–उल–कुजत ने किया था। इसका अधिकार क्षेत्र राजा के न्यायालय के समान था;

दीवान–ए–मुजालिम : आपराधिक मामलों के संबंध में यह न्यायालय श्रेष्ठ न्यायालय था। मुकदमों की सुनवाई के लिए इसका मूल आपराधिक अधिकार क्षेत्र था। यह आपराधिक अपील का सर्वोच्च न्यायालय था। इस अदालत की अध्यक्षता सद्र जहां ने की थी। मुगल काल के दौरान सद्र जहां को सदर–उस–सुदुर के नाम से जाना जाता था;

दीवान–ए–रिसालत : यह अदालत दीवानी मामलों के संबंध में अपील का सर्वोच्च न्यायालय था। इसका अधिकार केवल दीवानी मामलों में ही था। इस अदालत का नेतृत्व भी सदर जहां ने किया था;

सदर–ए–जहाँ कोर्ट : अन्य सभी अदालतों के अलावा सदर जहां अदालत थी। यह विशेष रूप से चर्च संबंधी

मामलों से संबंधित था। सदर जहान इस न्यायालय में पीठासीन अधिकारी थे;

दीवान–ए–सयासतः आपराधिक मुकदमों को मंजूरी देने के लिए यह अस्थायी न्यायालय था। यह केवल मुहम्मद तुगलक (1324–1351) के काल में था। वह इस न्यायालय के मुख्य अधिकारी थे।[13]

केंद्र में अदालतों में अधिकारी *सुल्तान* :

न केवल दरबार में बल्कि राज्य में भी सुल्तान एकमात्र अधिकारी था। वह तरह–तरह के केसों को आजमाता था। वह किंग्स कोर्ट में अपील का सर्वोच्च न्यायालय था। जहां उसे किसी मुद्दे को हल करने में कोई संदेह हो, वह उच्च नैतिक चरित्र के दो मुफ्ती और उसके दरबार से जुड़े इस्लामी कानून के विशेषज्ञों की राय पर विचार कर सकता था। मुफ्ती इस्लामी मामले पर अपनी राय देते थे हालांकि सुल्तान इस पर विचार कर सकते थे। ऐसी राय बाध्यकारी नहीं थी।

***सद्रे जहां* :**

उन्हें सद्रे कुल के नाम से भी जाना जाता था। यहां यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि यह श्रेष्ठ पद सुल्तान नसीरुद्दीन द्वारा 1248 में पेश किया गया था। इससे पहले न्यायपालिका में, मुख्य न्यायाधीश सभी प्रकार के मामलों की सुनवाई करने का एकमात्र अधिकारी था। सुल्तान ने इसमें मुख्य न्यायाधीश नियुक्त किया। सदर जहां दीवान–ए–मुजालिम का मुखिया भी था। 1248–1290 तक वे शाही स्तर पर न्यायपालिका के सर्वोच्च प्रमुख बने। वह चर्च विभाग के प्रमुख भी थे। उनके कर्तव्यों में शामिल थाः अन्य सभी न्यायालयों में काज़ियों की नियुक्ति, न्याय का प्रशासन, अधीनस्थ अधिकारियों को पत्र और सिफारिशें जारी करना, अपील के उच्च न्यायालय, और सभी मामलों में अधिकार क्षेत्र। उनके अन्य कर्तव्यों में शामिल था, सभी मामलों का निर्णय (इक्ता), उपाधियों का अनुदान (खिताबत), प्रार्थना में नेतृत्व (इमामत) और सभी धार्मिक मुद्दों के पर्यवेक्षक।[14]

मुख्य न्यायाधीश :

मुख्य न्यायाधीश न्यायपालिका में एकमात्र अधिकार था। वह न्यायिक विंग के प्रमुख थे। मुख्य न्यायाधीश द्वारा दीवान–ए–मुजालिम और दीवान–ए–सयासत की सभी अपीलों का निपटारा किया गया। सुल्तान आमतौर पर विद्वान व्यक्ति को मुख्य न्यायाधीश के रूप में नियुक्त करता था। नियुक्ति पत्र स्वयं सुल्तान ने जारी किया था। इसके अलावा, उसे सुल्तान द्वारा उसके कार्यालय से हटाया जा सकता था।

मुख्य न्यायाधीश के कार्य :

वह अपने अधिकार क्षेत्र में न्याय का संचालन करता था। इसके अलावा, वह सुल्तान के पद की शपथ दिलाते थे। उन्होंने सुल्तान के प्रवेश की शपथ ली। वह सिफारिशें दे सकता था जब सुल्तान द्वारा कानून बनाए गए थे। कुछ मामलों में उनकी जिम्मेदारी शिक्षण संस्थानों तक भी बढ़ा दी गई थी। सुल्तानों के शासनकाल में अधिकांश मुख्य न्यायाधीश कानून में विद्वान और चरित्र में स्वतंत्र थे। प्रांतों और जिलों के अन्य सभी क़ाज़ी मुख्य न्यायाधीश के पद से प्रभावित थे। मुख्य न्यायाधीश को सुल्तान के हस्तक्षेप के बिना स्वतंत्र रूप से अपने कार्यों को करने की आवश्यकता थी। मुख्य न्यायाधीश न्यायालय से जुड़े कर्मचारियों में शामिल हैं : मुफ्ती, मोहतासिब, पंडित, ददबक और काजी–ए–उर्दू।

प्रांतीय स्तर पर न्यायालय संगठन /पदानुक्रम :

प्रांतों में मुसलमानों के लिए केंद्र के समान कानून लागू था। अलग–अलग न्यायालय भी थे और उससे जुड़े अधिकारी भी। प्रान्त में पाँच न्यायालय थे। अदालतों

और अधिकारियों के पदानुक्रम को इस प्रकार समझाया गया है:

अदालत नाज़िम सुबा :

इसका मूल और उपयुक्त क्षेत्राधिकार था। इसकी अध्यक्षता राज्यपाल करते थे। उन्हें नाज़िम के नाम से भी जाना जाता था; *अदालत काज़ी–ए–सुबाह (प्रांतीय काज़ी न्यायालय):* यह विशेष रूप से कैनोल और सामान्य कानून के मामलों से संबंधित था। यह ऐसे मामलों के लिए अपीलीय मंच भी था और राज्यपाल द्वारा नियुक्त मुख्य काजी की अध्यक्षता में; *गवर्नर बेंच:* गवर्नर कोर्ट के अलावा गवर्नर बेंच भी थी। इसके पास सभी प्रकार के मामलों की कोशिश करने का मूल अधिकार क्षेत्र भी था। यह प्रांत में सर्वोच्च अपीलीय न्यायालय था;

दीवान–ए–सुबा :

सभी राजस्व मामले इस अदालत द्वारा तय किए जाते थे। वित्त और राजस्व से संबंधित सभी प्रकार के मामलों की कोशिश करने के लिए इसका मूल और अपीलीय क्षेत्राधिकार था; और *सदर–ए–सुबाह:* यह न्यायालय विशेष रूप से चर्च विभाग से संबंधित था। इस अदालत में कभी–कभी सुल्तान एक विशेष पीठ का गठन करते हैं।

प्रांतीय अदालतों में अधिकारी :

प्रांतीय न्यायालयों में अधिकारियों में शामिल थें: *राज्यपाल:* राज्यपाल प्रांत में प्रमुख था। उन्होंने प्रांत में सुल्तान का प्रतिनिधित्व किया। वह मुद्दों को तय करने के लिए एक न्यायाधीश की नियुक्ति करता था। उसके पास मूल और अपीलीय क्षेत्राधिकार था। राज्यपाल की पीठ भी वहां थी जिसमें निर्णयों के खिलाफ अपीलों की सुनवाई की जाती थी। यहां यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि काजियों के पास भू–राजस्व के मामलों की सुनवाई करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था, हालांकि राज्यपाल ही उन्हें तय करने का एकमात्र अधिकार था।[15] उनका मुख्य कार्य प्रांत में कानून और व्यवस्था बनाए रखना था;

काजी–ए–सुबा:

प्रांत में एक अन्य अधिकारी होता था जिसे प्रमुख प्रांतीय काजी के नाम से जाना जाता था। उसके पास प्रांत में दीवानी और फौजदारी मामलों की सुनवाई का अधिकार क्षेत्र था। उन्होंने राजस्व मामलों को हल नहीं किया। मुख्य प्रांतीय काजी के अधीन न्यायपालिका स्वतंत्र थी। यद्यपि वह राज्यपाल के अधीनस्थ था, लेकिन यह नहीं पाया गया कि राज्यपाल ने उसके मामलों में हस्तक्षेप किया। काजी–ए–सुबाह ट्रिब्यूनल के अध्यक्ष भी थे जो विशेष रूप से धार्मिक मुद्दों से निपटते थे। प्रांत में अन्य सभी काज़ियों की देख रेख उसके द्वारा की जाती थी। वह प्रांत में न्याय के प्रशासन के लिए जिम्मेदार था। उन्होंने प्रमुख कार्य किए और राजा द्वारा नियुक्त किए गए। कभी–कभी वे कार्य वाहक मुख्य न्यायाधीश के रूप में कार्य करते थे। उनके संलग्न अधिकारियों में शामिल हैं: मुफ्ती, पंडित, मोहतासिब और दादबक। दादबक बुलाने पर दरबार में आने वाले व्यक्तियों को देखा करते थे। वह न्यायालय में प्रशासनिक अधिकारी थे;

दीवान–ए–सुबा:

भू–राजस्व मामलों के संबंध में दीवान एकमात्र अधिकार था। राज्यपाल की अदालत में अपील की गई; और *सद्रे सुबाह:* वह प्रांत में मुख्य उपशास्त्रीय अधिकारी थे। वह धर्म से संबंधित मामलों का फैसला करता था। वह काजी–ए–सुबाह के साथ गवर्नर की बेंच में भी बैठे। उन्होंने प्रांत में सदर जहां का प्रतिनिधित्व किया। वह केवल उन मामलों का फैसला करता था जो काजियों के अधिकार क्षेत्र में नहीं था।

निष्कर्ष :

सुल्तान की कानूनी व्यवस्था के बारे में चर्चा को सारांशित करते हुए यह निष्कर्ष निकाला गया है कि सुल्तान अब्बासिद संस्थानों से बहुत प्रभावित थे और उन्होंने अब्बासिदों के प्रशासन के उसी मॉडल का पालन किया। गुलाम वंश का काल 1206–1290 तक था और इसकी स्थापना कुतुबुद्दीन ने की थी। इस राजवंश के अधीन ग्यारह शासकों ने शासन किया और उनमें से अंतिम को खिलजी वंश के संस्थापक जलालुद्दीन फिरोज खिलजी (1290–1296) ने पराजित किया था। अधिकांश सुल्तान न्याय के प्रशासन के प्रति गंभीर थे। इन सबके बीच, दो प्रमुख शासकों कुतुबुद्दीन और इल्तुतमिश ने इस्लामी कानून का पालन करना निश्चित कर दिया है। वे व्यक्तिगत रूप से लोगों के विवादों को निपटाने में शामिल थे। शासन की पूर्व अवधि कम थी, लेकिन उन्होंने न्याय के प्रशासन पर ध्यान केंद्रित किया, जबकि बाद में कुछ कानूनी सुधार पेश किए, जिसके तहत उन्होंने सभी न्यायाधीशों को निर्देष दिया कि कानून का कड़ाई से पालन किया जाना चाहिए और लोगों को न्याय व्यवस्था से अच्छी तरह परिचित होना चाहिए। वह खुद न्याय की जंजीर टांगने के लिए अपने महल के बाहर जाता था। बाद में मुगल बादशाहों ने भी इस तरह की प्रथा का पालन किया।दिल्ली के सुल्तानों ने कानूनी व्यवस्था पर ध्यान केंद्रित किया था इसलिए मामलों को तय करते समय न्यायाधीशों से निष्पक्षता की आवश्यकता थी। उन्हें शरिया कानून के सख्त पालन की आवश्यकता थी और इसके लिए सम्मान सुनिश्चित किया। किसी को भी किसी भी परिस्थिति में इसका उल्लंघन करने की अनुमति नहीं दी गई। सुल्तान भारत में प्रमुख और एकमात्र अधिकारी था। वह अपील का अंतिम न्यायालय भी था। सुल्तानों ने विशयों को विभिन्न विभागों में विभाजित किया। विभाग के प्रत्येक प्रमुख को अपनी क्षमता में न्याय करने की आवश्यकता थी। सुल्तानों ने कृशि उपज और व्यक्तिगत संपत्ति पर भी कर लगाया। न्यायपालिका की दृश्टि से सुल्तानों ने वहाँ के साम्राज्य को केन्द्र और प्रान्तों में बाँट दिया है। प्रांतों को जिलों में विभाजित किया गया और जिलों को आगे परगना में उप–विभाजित किया गया। केंद्र में विभिन्न कार्यों के साथ छह अदालतें थीं और ऐसे अदालतों से जुड़े अधिकारी सुल्तान, मुख्य न्यायाधीश, सदर जहां, मुफ्ती और मंत्री थे। न्याय के प्रशासन के लिए मुख्य न्यायाधीश के कंधों पर बड़ी जिम्मेदारी थी। कुछ मामलों में सदर जहान मुख्य न्यायाधीश के कार्य भी करते थे, हालांकि वे चर्च विभाग के मुख्य प्रमुख थे। प्रांतों में, सभी न्यायिक कार्य प्रांतीय काज़ी द्वारा किए जाते थे।

संदर्भ :

1. अफिफ, एस.एस. (1891), तारिख फिरोज शाही, बिब्लियोटिका इंडिका सीरीज कलेक्शन, कलकत्ता, पृ. 508.
2. अहमद, एम.बी. (1941), मध्यकालीन भारत में न्याय प्रशासन, अलीगढ़ ऐतिहासिक अनुसंधान संस्थान, अलीगढ़ विश्वविद्यालय, पृ. 98.
3. अशरफ, के.एम. (1988), लाइफ एंड कंडीशंस ऑफ द पीपल ऑफ हिंदुस्तान, नई दिल्लीः मुंषीराम मनोहरलाल पब्लिषर्स प्राइवेट लिमिटेड, पृ. 64.
4. बरनी, जेड (1983), तारिख–ए–फिरोज शाही, लाहौर, पृ. 105, 106।
5. बेवरिज, एच. (1867), भारत का व्यापक इतिहास, खंड 2, कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय पुस्तकालय, ब्लैकी एंड सन द्वारा प्रकाशित, लंदन, पृ. 102.

6. ब्रिग्स, डब्ल्यू. (1829), हिस्ट्री ऑफ द राइज ऑफ द मुस्लिम पावर इन इंडिया टिल द ईयर ए.डी. 1612, प्रिंटेड फॉर लॉन्गमैन, रीस, ओर्मे, ब्राउन और ग्रीन, पृ. 199.
7. इलियट, एच.ई. (1877), द हिस्ट्री ऑफ इंडिया, एज़ टॉल्ड बाय इट्स ओन हिस्टोरियंस, वॉल्यूम टप्पः टू एंड ऑफ़ द मुहम्मडन एम्पायर इन इंडिया, पष् 363.
8. एलफिंस्टन, एम. (1843), हिस्ट्री ऑफ इंडिया 1857–1905, आठ खंड, लंदनः जे. मरे लंदन, वॉल्यूम 8, पृ. 363.
9. एलफिंस्टन, एम. (1843), द हिस्ट्री ऑफ इंडिया, टू वॉल्यूम, वॉल्यूम 1, लंदन जॉन मरे, अल्बेमर्ले स्ट्रीट, पृ. 421.
10. हबीब, आई. (1980), "बरनीज़ थ्योरी ऑफ़ द हिस्ट्री ऑफ़ द डेल्ही सल्तनत", द इंडियन हिस्टोरिकल रिव्यू, नंबर 1–2, पृ. 99–115।
11. हबीब, एम. (1981), पॉलिटिक्स एंड सोसाइटी ड्यूरिंग द अर्ली मेडिवल पीरियड, वॉल्यूम। 2, नई दिल्लीः पीपल्स पब्लिशिंग हाउस, पृ. 158.
12. इस्लाम आर. और बोसवर्थ सी.ई. दिल्ली सल्तनत, आईएसबीएन 978–92–3–103, पृ. 275–277।
13. जैक्सन, पी. (1999), द डेल्ही सल्तनतः ए पॉलिटिकल एंड मिलिट्री हिस्ट्री, कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. 242–244।
14. मलिक, आई.एच. (2008), पाकिस्तान का इतिहास, आधुनिक राश्ट्रों का ग्रीनवुड इतिहास फ्रैंक डब्ल्यू ठाकरे और जॉन ई. फाइंडलिंग, श्रंष्खला संपादक, ग्रीनवुड प्रेस वेस्टपोर्ट कनेक्टिकट लंदन, पृ. 55.
15. कुरैषी, आई.एच. (1971), दिल्ली सल्तनत का प्रषासन, ओरिएंटल बुक्स रीप्रिंट कॉर्पोरेशन, पी।
16. रिजवी, एस.ए.ए. (1978), भारत में सूफीवाद का इतिहास, दिल्ली, पृ. 356–57